: तृतीय अध्याय :

“अज्ञेय के उपन्यासों का सामान्य परिचय”

: तृतीय अध्याय :

``अज्ञेय के उपन्यासों का सामान्य परिचय``

प्रास्ताविक :-

हिंदी उपन्यास लेखन का सही प्रारंभ उपन्यास सम्राट प्रेमचंद से माना जाता है। उन्होंने पूर्व प्रचलित तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी तथा रहस्य-रोमांच से युक्त उपन्यास की कोटि से अलग हटकर समाज की वास्तविकता का चित्रण किया है। उन्होंने हिंदी उपन्यास को भटकंती से बचाकर सही मार्ग पर ला खड़ा कर दिया है। प्रेमचंद के बाद उपन्यास विधा में समाज-जीवन से हटकर व्यक्तिवादी अर्थात मनोवैज्ञानिक उपन्यास की एक धारा प्रवाहित हुई। व्यक्ति-मन के अंतर्पर्दों को खोलने का काम इन उपन्यासों द्वारा होने लगा। जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी ने इस धारा का प्रारंभ किया। लेकिन वे बहुत दूर तक इसी नाँव को नहीं ले जा सके। उसी समय सन् 1940 में `अज्ञेय` ने उपन्यास क्षेत्र में पदार्पण किया और इस मनोवैज्ञानिक धारा को प्रवाहित किया। यहाँ तक कि वे इलाचंद्र जोशी से भी आगे निकल गए। कहना उचित ही होगा कि हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को प्रौढ रुप देने का श्रेय `अज्ञेय` जी को ही है। उन्होंने व्यक्ति मानस का यथार्थ और मनोवैज्ञानिक चित्रण बहुत ही सफलता के साथ किया। मनोविज्ञान के साथ ही उनका शिल्प-विधि में भी सराहनीय योगदान रहा है। उनके लेखन के बारे में प्रसिद्ध समीक्षक देवेश ठाकुर लिखते हैं - ``उपन्यास लेखन के संदर्भ में अज्ञेय अपने समकालीन लेखकों से विशिष्ट माने जाते रहे हैं। इसका कारण उनकी प्रयोगशील प्रवृत्ति का होना रहा है। प्रेमचंद युगीन साहित्यकारों में समाज को व्यक्ति से अधिक महत्त्व देने का आदर्श प्रतिष्ठित था। अज्ञेय के साहित्य में व्यक्ति-स्वातंत्र्य और समाज-विद्रोह का स्वर प्रमुख है।``[1] अत: गहन मनोविज्ञान और असामान्य भाषा-शैली के कारण आज भी हिंदी साहित्य में अज्ञेय का अपना अलग ही स्थान रहा है। हिंदी उपन्यास विकास-यात्रा के महान स्तंभों में लाला श्रीनिवासदास और प्रेमचंद की युगांतकारी रचनाओं ------ `परीक्षागुरु` और `गोदान` के पश्चात अज्ञेय की प्रथम औपन्यासिक कृति `शेखर : एक जीवनी` की परिगणना की जाती है। शिल्पगत नवीन प्रयोगों की दृष्टि से अज्ञेय की रचनाएँ नवीन युग का सूत्रपात करती हैं। उन्होंने सिर्फ तीन ही उपन्यास लिखे हैं। जिनमें - `शेखर : एक जीवनी` - भाग-1 सन् 1940 में, भाग-2 सन् 1944 में और `नदी के द्वीप` सन् 1951 में तथा `अपने-अपने अजनबी` सन् 1961 में प्रकाशित हुए हैं। सिर्फ तीन ही उपन्यास लिखकर

उन्हें काफी सफलता मिली। अज्ञेय जी के उपन्यास लेखन में वैविध्य रहा है। उनके हर एक उपन्यास का परिवेश अलग ही रहा है। अहं, सेक्स और भय उनके उपन्यास के केंद्र रहे हैं। `शेखर : एक जीवनी` में अहं को `नदी के द्वीप` में सेक्स को और `अपने अपने अजनबी` में भय को प्रधानता दी गई है।

2.1 शेखर : एक जीवनी :-

हिंदी साहित्य के चुनींदा लेखक ही हैं जिन्होंने पिष्टपेशन परंपरा से हटकर हिंदी उपन्यास साहित्य को एक नया आयाम प्रदान किया है। उनमें से एक है अज्ञेय जी। बीसवीं शताब्दी को मनोविज्ञान के युग का दर्जा देते हुए डॉ. सुकृता अजमानी लिखती हैं - ...``बीसवीं शताब्दी को मनोविज्ञान का युग कहा जाता है। हिंदी उपन्यास साहित्य में इसका प्रवेश इस शताब्दी के चौथे दशक में जैनेंद्र के `परख`(1929), `त्यागपत्र`(1937), इलाचंद्र जोशी के `घृणामयी` (1929), `संन्यासी`(1941) और अज्ञेय के `शेखर : एक जीवनी`(1940) के प्रकाशन के साथ हुआ।``[2] अज्ञेय ने सिर्फ तीन उपन्यास लिखे हैं। तीनों ही उपन्यास विषय और परिस्थिति की दृष्टि से अपना अलग महत्त्व रखते हैं। उनका प्रथम उपन्यास `शेखर : एक जीवनी` तीन भागों में विभक्त है, जिनतें से दो प्रकाशित हुए हैं तथा तीसरा अभी भी अप्रकाशित है। `शेखर : एक जीवनी भाग - 1` चार अनुभागों में विभाजित हैं - `उषा और ईश्वर` , `बीज और अंकुर`, `प्रकृति और पुरुष`,`पुरुष और परिस्थिति` तो `शेखर : एक जीवनी भाग-2` , `पुरुष और परिस्थिति`, `बंधन और जिज्ञासा`, `शशि और शेखर`, `धागे रस्सियाँ गुंझर` इन चार अनुभागों में विभाजित है।

फाँसी के तख्ते पर खड़ा शेखर जब अपने विगत जीवन को याद करता है तो सर्वप्रथम उसे वे ही घटनाएँ याद आती है जिसने सबसे ज्यादा प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर किया है। इसी कारण कथावस्तु में एकरसता का अभाव अवश्य है, फिर भी उसमें एक आकर्षण है। शेखर का यह घटना संगठन वैसा ही है, जैसे मोतियों की माला टूट गई हो और बिखरे मोतियों को फिर एक लड़ी में पिरो दिया गया है। अज्ञेय जी ने चित्रित किया हुआ शेखर प्राप्त-दंड के कारण अद्भूत घनीभूत वेदना की केवल एक रात में देखे हुए `विजन`(vision) को शब्दबद्ध करने का उपन्यासात्मक प्रयास मात्र है। एक कुंठित बालक से क्रांतिकारक और क्रांतिकारक से फाँसी के फंदे तक का सफर आत्मकथात्मक शैली में शब्दबद्ध करने का सफल प्रयास है।

शेखर का जन्म देहात से बाहर विरान भूमि में बौद्ध विहार के खंडहरों के पास हुआ था। भिक्षुओं ने शिशु को बुद्धावतार मानकर बौद्ध धर्म की दीक्षा देने का प्रस्ताव रखा था। इसी कारण उसका नाम बुद्धदेव रखा गया था लेकिन उसकी मौसी विद्यावती ने देखते ही उसका नाम चंद्रशेखर रखने के लिए कहा। तभी से उसका नाम शेखर प्रचलित होता है। पिताजी ने उसे इंजीनियर तो माँ ने बैरिस्टर बनाने का संकल्प किया था। इस प्रकार जन्म के साथ ही वह इन बंधनों में बंध जाता है।

शेखर को अपने जीवन की दो-एक घटनाएँ याद आती है जिनमें अहं, भय और सैक्स की प्रबल अनुभूतियाँ हैं। उसका विश्वास है कि ये तीनों अनुभूतियाँ ही प्रत्येक मानव के जीवन का अनुशासन करती है। वह जीवन की अंतिम अवस्था में पहुँचकर विगत जीवन का प्रत्यावलोकन करता है। वह आत्मसाक्षात्कार द्वारा स्वयं को अभिव्यक्त करना चाहता है। यह आत्मनिरीक्षण मानवता के संचित अनुभवों के प्रकाश में ईमानदारी से आत्मानुभूति तथा किंचित आत्मघटित जीवन तथ्यों के अनासक्त अंकन के आधार पर किया गया है। फलत: यह निरीक्षण काल्पनिक की अपेक्षा वैज्ञानिक अधिक है।

बालक शेखर के मन में उत्पन्न होनेवाली सूक्ष्म तरंगों, जिज्ञासाओं, सहजात प्रवृत्तियों, वातावरण जन्य प्रभावों , माता-पिता तथा गुरुजनों के व्यवहारों और प्रताडनाओं से उत्पन्न दमन तथा मानसिक ग्रंथियों आदि को बाल-मनोविज्ञान के आधार पर सूक्ष्म अध्ययन करके प्रौढ भाषा और नवीन शिल्प के माध्यम से व्यक्त किया है। अज्ञेय जी ने बाल मनोविज्ञान के शास्त्रीय पक्ष-निरुपण की अपेक्षा स्वाभाविकता पर अधिक बल दिया है। जैसे घर-में एक शिशु के जन्म लेने पर उसके मन में सहसा प्रश्न उठता है कि बच्चे कैसे आते हैं ? तैरना न जानने के कारण वह माँझियों द्वारा डूबने से बचाया जाता है। पंसारी की दूकान पर युद्ध में मारे गये सैनिकों की खबर सुनकर मृत्यु के विषय में उसके मन में जिज्ञासा उत्पन्न होती है। उसकी जिज्ञासाओं को शांत करने की अपेक्षा ईश्वर की आड लेकर उपेक्षा की जाती है। फिर ईश्वर-संबंधी जिज्ञासा उसके मन में उठती है। माता-पिता, बहन आदि द्वारा उसकी जिज्ञासाओं का दमन होता है जिसके परिणामस्वरुप उसमें अपराध-वृत्ति जागृत होती है। वह चोरी और चुगलखोरी करने लगता है। परिवार में माता-पिता के पारस्परिक व्यवहारों, पिता के अनैतिक आचरणों, माँ के प्रति उनका बलात् व्यवहार माँ का छाती फाडकर चिल्लाना, नौकरानी का पीठ उघाड कर दिखाना आदि से उसके मन में यौन संबंधी भावनाएँ उमड़ती हैं जिनके अस्वाभाविक दमन के फल-स्वरुप वह `दोजारु का पति` और `सुंदरी

डाकू` आदि अश्लील पुस्तकें पढ़ने लगता है। शेखर को विद्रोही और क्रांतिकारी बनानेवाली तीन प्रेरणाएँ अहं, भय और सेक्स हैं।

तीन वर्षीय बालक के पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना, लेटर बॉक्स पर चढ़कर आने-जानेवालों को मुँह बना-बनाकर चिढ़ाना, इच्छा के प्रतिकूल डाकिए द्वारा उतारे जाने पर उसके पैरों की ऊँगलियों को कुचल देना, अजायबघर में भयानक बाघ के दाँतों और आँखों को देखकर मन में भय का संचार होना, भूसे से भरे बाघ को चाकू से काटना आदि द्वारा उसकी स्वाभाविक वृत्तियों का परिचय प्राप्त होता है। शेखर स्वनिर्मित नियमों के अनुसार आचरण करता है। वह किसी भी स्कूल में नहीं पढ़ पाता है। इससे उसके चरित्र में त्रुटियाँ निर्माण होती है, लेकिन एक शक्ति भी उसने पायी, जो स्कूल में कम मिलती है।

`शेखर : एक जीवनी` में शेखर के जन्म से लेकर युवावस्था की उसकी कहानी मौजूद है। उसके जीवन में से कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं की ओर संकेत करना क्रमप्राप्त होता है। शेखर का जन्मजात विद्रोही स्वभाव उसे चोर और चुगलखोर बना देता है। समाज से कटा हुआ शेखर हमेशा सरस्वती के पास रहने लगता है। इसी कारण सभी उसे चिढ़ाते हैं। सरस्वती की शादी की खबर से वह बहुत दु:खी होता है। शादी के बाद वह खुद को निराधार महसूस करता है। युवा शेखर के शरीर में अनेक परिवर्तन होने लगते हैं। मन की अशांति अधिक बढ़ने लगती है। एक अलग ही प्यास उसके शरीर में जगने लगती है।

माता-पिता में उत्पन्न झगड़ों के कारण माता निकल जाती है तो पिताजी सभी को पिटते हैं। एक दिन शेखर तार देने के लिए कमरे में जाता है तो पिता उसकी माँ को बाहों में घेरे दिखाई देते हैं। शेखर को देखकर माँ सकपका जाती है। तार द्वारा पता चल जाता है कि सरस्वती को आठमासी लड़की हुई है। शेखर की पुरानी जिज्ञासा फिर से जागृत होती है - क्या सरस्वती के शरीर में भी लड़की छिपी हुई थी? शेखर माँ, रसोइयाँ आदि सभी से पूछता है और फिर एक बार उसका प्रश्न अनुत्तरित रहता है। इस तरह जिज्ञासू शेखर की जिज्ञासा प्रश्न ही बनकर रहती है।

शेखर बड़ा होने पर उसे क्रांति के कारण जेल में जाना पड़ता है। जेल से बाहर आने के पश्चात वह पहले प्रोफेसर हथि के घर और वहाँ से शशि के घर पहुँचता है। सबसे पहले शशि के पति

रामेश्वर की भेंट होती है। वह शेखर का यथोचित स्वागत करता है और ठहरने का आग्रह कर क्लब चला जाता है। शेखर शशि को अपना पूरा इतिहास बताता है। शशि शेखर के भावी जीवन के बारे में पुछती है तब शेखर बताता है कि समाज की सड़ी हुई परंपरा को तोड़ने के लिए और उसे नव-निर्माण देने के लिए उसने साहित्यकार बनने का निश्चय किया है।

अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए शेखर एक कमरा किराए पर लेता है। खाने का प्रबंध एक नजदीकी होटल में कर देता है। एकांत में भी अपने ही विचारों में उलझा शेखर कुछ लिख नहीं पाता क्योंकि वह ऐसे साहित्य का सृजन करना चाहता था - `` जो क्रांति की प्रेरणा दे------ और क्रांति? एक पक्षीय नहीं सर्वतोमुखी क्रांति।``[3] कुछेक छोटी-मोटी कहानियाँ और निबंध शेखर लिखता है और वो डाक द्वारा शशि को भेजता है। शशि भी कई बार अकेली तो एक-दो बार पति के साथ उसे मिलने आती है। वह हमेशा शेखर को प्रेरणा देती रहती है। शेखर लगभग एक महीने के जी तोड़ मेहनत से एक पुस्तक लिखता है - `हमारा समाज`। वह उसे जल्दी-जल्दी प्रकाशित करवाना चाहता है, ताकि उसे रुपये मिलें। वह कई प्रकाशकों के पास जाता है किंतु कोई भी उसे स्वीकार नहीं करता। आखिर एक प्रकाशक कई शर्तों पर तैयार होता है। शेखर अपनी विवशता के कारण उन शर्तों को स्वीकार कर लेता है। कुछ दिनों बाद जीवन के संघर्ष से बिल्कुल टूटे हुए पिता शेखर को मिलने आते हैं। वे शेखर को समझाते हैं कि वह घर चले और विवाह कर ले। बार-बार समझाने पर भी शादी न करने के अपने निर्णय पर वह अड़िग रहता है। हताश होकर पिता घर लौट जाते हैं। ऐसे अनेक प्रसंग शेखर के जीवन में घटित होते हैं।

दूसरे भाग में शेखर एक गतिशील पात्र के अनुकूल उपस्थित हुआ है। शशि, बाबा मदनसिंह, मोहसिन आदि उसकी अहं और विद्रोह शक्ति का परिष्कार करते हैं। शशि रमेश की पत्नी होते हुए भी शेखर की विद्रोही भावना को उचित दिशा प्रदान करती है। प्रारंभ में जो विद्रोह उसके मन में माँ, ईश्वर, समाज, रोग और मृत्यु आदि के प्रति था, वह विदेशी शासन के विरुद्ध लड़ने से शांत हो जाता है। शेखर अंत में स्वयं यह स्वीकार करता है कि - ``प्राणी की सार्थकता उसके सामाजिक अथवा अहंग्रस्त होने में नहीं बल्कि, प्राणी की प्राणवत्ता का मान है, उसका प्यार। उसको अपने आप से बाहर प्रसारित होने की, निछावर होने की शक्ति।``[4] इस तथ्य का मान उसे परिस्थितियों तथा पात्रों के संपर्क में आने पर ही होता है।

उसकी अंतर्निहित मानवता का उदय होता है, अहं का शमन होता है और विद्रोह-भावना स्वस्थ विद्रोह शक्ति में परिणत हो जाती है।

उपन्यास के अंत में शशि का स्वास्थ्य निरंतर गिरता जाता है। फिर भी वह अपनी अपार वेदना छिपाकर शेखर के लिए एक संपूर्ण प्रेरणा बन जाना चाहती है। वह चाहती है कि शेखर एक उत्कृष्ट साहित्यकार बनें, समाज में उसका मूर्धन्य स्थान हो। शेखर का स्निग्ध प्रेम इन दिनों वासना से स्फुटित होता है। दिनों-दिन शशि की गिरती हालत देखकर शेखर रात-दिन उसकी सेवा में जुट जाता है। शशि अपनी मौत को सामने देखने लगती है और एक दिन एक पत्र में शेखर के प्रति अपना संपूर्ण त्याग, कृतज्ञता व्यक्त करके वह परलोक सिधार जाती है। उसकी मृत्यु से शेखर का सारा जीवन शून्य हो जाता है। तब शेखर को एहसास होता है कि उसके ``जीवन ने अर्थ खो दिया है, यथार्थता, व्यवस्था, गति सब-कुछ खो दिया है। निरा अस्तित्व - एक क्षण से दूसरे क्षण तक एक अणु-पुंज का बने रहना - वह भी मिट गया है। मैं एक छाया हूँ, एक स्वप्न, एक निराकार आक्रोश, एक वियोग, एक रहस्य-भावना से भावना तक भटकता हुआ एक विचार - हर जगह आग देता हुआ न बुझता हुआ, न मरता हुआ।``[5]

साहित्यशिल्पी अज्ञेयजी की प्रतिभा का ज्वलंत प्रतीक `शेखर : एक जीवनी` का प्रथम भाग सन 1940 में और द्वितीय भाग सन् 1944 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास के सहारे ही अज्ञेय जी ने हिंदी उपन्यास साहित्य में प्रवेश किया है। `शेखर : एक जीवनी` शेखर की बचपन से लेकर युवावस्था तक की घटनाओं और उसके बौद्धिक संघर्ष की कथा है। प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु बहुत ही विशाल और बिखरी पडी है। उसमें एकसूत्रता का अभाव ही है। शेखर के बालस्वभाव का मनोवैज्ञानिक और यथार्थ चित्रण हिंदी साहित्य के लिए एक नयी देन है। प्रथम भाग में शेखर की जिज्ञासा और वय:संधि का चित्रण किया गया है। उसकी कुंठित भावना को लेखक ने उजागर करने का प्रयास किया है। द्वितीय भाग में शेखर के क्रांतिकारी तथा विद्रोही प्रवृत्ति को साकार करने का प्रयास किया है। पितृसत्ता प्रधान परिवार व्यवस्था, राजनीतिक आडम्बर, निरर्थक शिक्षा पद्धति, छुआछूत की भयंकरता आदि कई बुरी प्रथाओं को सामने रखने का प्रयास इस कथावस्तु में किया गया है। अत: एक विद्रोही व्यक्तित्व को स्पष्ट करने का सफल प्रयास प्रस्तुत कथा के माध्यम से हुआ है।

पात्रों की दृष्टि से इसमें दो ही प्रमुख पात्र हैं - शेखर और शशि। शेखर एक जिज्ञासु, कुंठित और विद्रोही व्यक्तित्व है। उसके किसी भी प्रश्न का सही उत्तर न मिलने से वह कुंठित बन जाता है। शेखर में सभी अच्छे-बुरे गुणों का समन्वय हो गया है। लेखक ने प्रथम ही शेखर के बारे में कहा है - ....``शेखर कोई बडा आदमी नहीं है, वह अच्छा भी आदमी नहीं है। लेकिन वह मानवता के संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है। यह अच्छा संगी भी नहीं हो सकता, लेकिन उसके अंत तक उसके साथ चलकर आपके उसके प्रति भाव कठोर नहीं होंगे, ऐसा मुझे विश्वास है।``[6] शेखर को परिस्थिति ही प्रत्येक क्षेत्र में विद्रोह करने के लिए मजबूर कर देती है। दूसरा प्रमुख पात्र है शशि। वह शेखर के प्रति पूर्णत: समर्पित है। वह शेखर की प्रेरणा है। वह जितनी रागात्मक है उतनी ही त्यागमयी भी है। शेखर के निर्माण के लिए शशि स्वयं का उत्सर्ग कर देती है। कुसुम त्रिवेदी शशि के इस त्याग के बारे में कहती हैं - ......``शशि का यह त्याग ही शेखर के अहं का परिष्कार एवं उसकी विद्रोही भावना को सही दिशा देने में समर्थ होता है और शेखर में `शील विकास` का जन्म होता है।``[7] इन दो प्रमुख पात्रों के अलावा बाबा मदनसिंह, मोहसिन, राम जी आदि जेल के सहयोगियों का भी प्रभाव शेखर पर पडता है। क्रांतिकारी विद्याभूषण, शारदा, शांति, रामेश्वर, विद्यावती आदि भी पात्रों का चित्रण कुशलतापूर्वक किया गया है। इन सभी पात्रों में रोचकता एवं विविधता दिखाई देती है।

कथोपकथन उपन्यास को आगे बढ़ाने और पात्रों की मनस्थिति व्यक्त करने में अधिक सहयोग सिद्ध होते हैं। `शेखर : एक जीवनी` के दोनों भागों में कथोपकथन का पर्याप्त प्रयोग किया गया है। फिर भी दोनों भागों के संवादों में अंतर दिखायी देता है। क्योंकि पहले भाग में एक बालक के सहज-सुलभ कथन है तो दूसरे भाग में गंभीर संवाद परिलक्षित होते हैं। कुछ अधूरे ही संवाद दिखाई देते हैं।

`शेखर : एक जीवनी` आत्मकथात्मक उपन्यास है। अत: इसकी शैली मूलत: विवरणात्मक ही है। प्रसंगानुरुप अनेक शैलियों का प्रयोग अज्ञेयजी ने इस में किया है। प्राकृतिक चित्रण प्राय: अलंकृत शैली में किया है। उपन्यास की कथावस्तु के अनुरुप ही गरिमामय, उदात्त और गंभीर शैली का भी प्रयोग हुआ है। जहाँ कथा का विस्तार है वहाँ सरल और गद्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। प्रसंगानुरुप कोमलकांत और साथ-साथ ओजस्वी भाषा का भी प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं छायावादी भाषा

की तरलता भी है। अत: कहा जा सकता है कि `शेखर : एक जीवनी` की भाषा में वे सभी गुण विद्यमान है जो किसी भी समृद्‌ध एवं समर्थ भाषा के लिए अपेक्षित होते हैं।

किसी भी चरित्र के निर्माण में युगीन परिस्थिति, उस समय का वातावरण आदि सभी बातों का योगदान रहता है। `शेखर : एक जीवनी` की रचना प्रथम तथा द्‌वितीय विश्वयुद्‌ष के दौरान की गयी है। परिणामता: उस समय के युगीन परिवेश का चित्रण उपन्यास में हुआ है। अत: उस समय की पितृसत्ताक परिवार व्यवस्था, दुषित शिक्षा-प्रणाली, छुआछूत, जातियता, विद्यार्थी जीवन में बढ़ती विलासीनता का अंकन भी किया गया है। जिसका शेखर के निर्माण पर बड़ा असर पड़ा है। विश्वयुद्‌ष के बाद की परिस्थितियाँ, बढ़ती मँहगाई, भुखमरी और बीमारी का चित्रण भी किया गया है। स्वतंत्रता आंदोलन के लिए पूरी जनता गांधीजी के विचारों पर चलती थी। सभी पर गांधीवाद छाया हुआ था। यह चित्रण युगीन परिस्थितियों का ही बोध करता है। शेखर कश्मीर, लाहौर, अमृतसर, लखनऊ, मद्रास आदि जगह भ्रमण करता है। परिणामस्वरुप वहाँ के लोकजीवन का चित्रण भी हुआ है। अनेक स्थानों प्रकृति चित्रण भी किया गया है। अत: वातावरण की व्यापकता और विविधता के कारण यह उपन्यास अज्ञेय के अन्य दो उपन्यासों की अपेक्षा सफल हुआ है।

उद्देश्य के बिना रचना असंभव ही होती है। अत: `शेखर : एक जीवनी` अनेक उद्देश्यों को स्पष्ट करता है। इसका मुल उद्देश्य व्यक्ति स्वतंत्रता की खोज है। नायक शेखर पर बाल्यकाल में ही अनेक मर्यादाएँ थोपी जाती हैं, जिससे छुटकारा पाने के लिए वह हमेशा छटपटाता रहता है। परिणामस्वरुप वह अपने माँ-बाप से विद्रोह करता है। पारिवारिक यंत्रणा को अस्वीकार कर देता है। युवावस्था में सामाजिक बंधनों के खिलाप विद्रोह करता है। इस प्रकार स्वतंत्रता के लिए छटपटाते शेखर की मानसिक अवस्था का चित्रण ही प्रमुख उद्देश्य रहा है। साथ ही साथ उसके अंतर्मन का विश्लेषण भी प्रमुख उद्देश्य रहा है। शशि और शेखर के माध्यम से प्रेम और नीति की समस्या उठाने का प्रयास भी लेखक ने किया है। शशि के माध्यम से नारी की दयनीय स्थिति, विकार ग्रस्त विवाह पद्‌धति, जेल जीवन का अत्याचार और न्याय व्यवस्था में सुधार आदि कई उद्देश्यों से उजागर करने का सफलतम प्रयास अज्ञेयजी ने किया है। अत: उद्देश्य की दृष्टि से यह रचना पूर्णत: सफल रही है।

2.2 नदी के द्वीप :-

प्रस्तुत उपन्यास का प्रकाशन सन् 1951 में हुआ। `नदी के द्वीप` एक उच्चस्तरीय प्रेमकथा है, जिसमें पीड़ा के माध्यम से मुक्ति पाने का दर्शन प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में नायक भुवन, दो नायिकाएँ गौरा और रेखा तथा खलनायक चंद्रमाधव ये चार ही प्रमुख पात्र हैं। चंद्रमाधव रेखा और गौरा दोनों को पाना चाहता है लेकिन असफल रहता है। रेखा और गौरा भुवन के प्रति समर्पित है। भुवन वैज्ञानिक है। इस उपन्यास का पूरा कथानक एक पुरुष एवं दो नारियों के इर्द-गिर्द मँडराता है, लेकिन प्रेमकथाओं का प्रचलित त्रिकोण यहाँ नहीं है। एक प्रेमिका के दो प्रेमी है या कि नायक जिस नायिका से प्रेम करता है वह उससे प्रेम न कर दूसरे युवक से प्रेम करती है। `नदी के द्वीप` का प्रेम त्रिकोण इतना सरल नहीं कि सूत्र रुप में कहा जा सके। इस कथानक में भौतिक घटनाओं का विस्तार नहीं है। पात्रों की संवेदनाओं के विकास उनको मानसिक चिंतन प्रणालियों के सूक्ष्म विश्लेषण, गहन मानसिक स्थितियों के वर्णन आदि के द्वारा उपन्यास के आकार को बढाया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास ग्यारह अनुभागों में विभाजित है। वे क्रमशः भुवन, चंद्रमाधव, गौरा, अंतराल, रेखा, भुवन, चंद्रमाधव, रेखा, अंतराल, गौरा और उपसंहार है। एक सरल कथाशैली का प्रयोग यहाँ पर नहीं हुआ है। उपन्यास की अलग-अलग शैली को बडी सहजता से इसमें उतारा गया है। उनकी इस काव्यात्मकता की प्रशंसा करते हुए डॉ.देवेश ठाकुर लिखते हैं - ``आज के विज्ञान संमत युग में संक्षिप्त वस्तु को लेकर लिखे जानेवाले उपन्यासों की बात समझ में आती है। किंतु 1951 में प्रकाशित `नदी के द्वीप` के वायवी विस्तार को अत्यंत संक्षिप्त कथानक से उठाना वस्तुतः लेखक के विशिष्ट शिल्पकला का सूचक है।``[8]

भुवन एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक है। वह अपने मित्र चंद्रमाधव से मिलने के लिए लखनऊ जाता है। चंद्रमाधव `पायनियर` का विशेष संवाददाता है। वह अनेक विदेश यात्राएँ भी कर चुका है। वहीं पर भुवन की भेंट चंद्रमाधव के माध्यम से रेखा से होती है। रेखा एक नामी डाक्टर की इकलौती बेटी है। उन्निस वर्ष की अवस्था में रेखा का विवाह हेमेंद्र के साथ हुआ था परंतु विवाह के दो वर्ष बाद ही दोनों अलग हो जाते हैं। तभी से आज तक रेखा अनेक जगहों पर नौकरी कर चुकी है। अनेक जगहों पर वह स्वाभिमान

आहत होते देखकर इस्तिफा दे देती थी। उसके पति ने दूसरी शादी की थी। रेखा का यह दिलचस्प इतिहास जानकर ही चंद्रमाधव उसकी ओर आकर्षित होता है। भुवन भी रेखा को असाधारण नारी मानता है।

रेखा का जीवन संबंधी अपना अलग ही अंदाज है। भुवन, चंद्रमाधव और रेखा जब काफी हाऊस में विविध विषयों पर वार्तालाप करते रहते हैं तब रेखा कहती है - ... ``मैं तो समझती हूँ, हम अधिक से अधिक इस प्रवाह में छोटे-छोटे द्वीप हैं, उस प्रवाह से घिरे हुए भी, उस से कटे हुए भी, भूमि से बँधे और स्थिर भी, पर प्रवाह में सर्वदा असहाय भी न जाने कब प्रवाह की एक स्वैरिणी लहर आ कर मिटा दे, बहा ले जाय, फिर चाहे द्वीप का फूल-पत्ते का आच्छादन कितना ही सुंदर क्यों न रहा हो।``[9] जीवन, क्षण आदि के बारे में भुवन की बातों से रेखा प्रभावित होती है। भुवन को भी रेखा के बारे में दिलचस्पी लगने लगती है। चंद्रमाधव भी शादी-शुदा होकर अपनी पत्नी और बच्चों को छोड़कर अलग रहता है। वह रेखा को अपनाने के लिए कई फाँसे तैयार करवाता है मगर हमेशा असफल रहता है। अंत में वह रेखा और गौरा पर किए प्रेम में असफल होने पर मुंबई चला जाता है और वहाँ पर एक फिल्म एक्ट्रेस के साथ शादी कर लेता है।

उपन्यास का मध्य तथा विकास ज्यादहतर पत्र और डायरी शैली में ही हुआ है। रेखा और भुवन में पत्र-व्यवहार शुरु हो जाता हैं। पूरे उपन्यास में इन दो पात्रों के अतिरिक्त चंद्र और रेखा, चंद्र और गौरा, रेखा और भुवन तथा गौरा और भुवन आदि के बीच भी पत्र-व्यवहार चलता रहता है। इन पत्रों के अलावा डायरियों में उद्धृत उक्तियों तथा देशी-विदेशी कविताओं के उद्धरणों के माध्यम से पात्रों की मनोभावनाओं, उनके रागद्वेष आदि का पता चलता रहता है।

रेखा कश्मीर में नौकरी करने लगती है। अब उसके पेट में भुवन का बच्चा पलने लगता है। उधर हेमेंद्र रेखा से तलाक लेने आता है और वकिल से सलाह लेता है। गौरा बनारस में संगीत शिक्षिका की नौकरी स्वीकार कर लेती है। वह भुवन को भी मिलती रहती है। उनकी बातों से गौरा का अनुराग और भी स्पष्ट दिखाई देता है लेकिन भुवन मन से उसे चाहकर भी उससे दूर-दूर भागता रहता है। उससे पलायन करना चाहता है।

13434
A

रेखा अब भी अपने को `फुलफिल्ड` समझती है। भुवन कुछ दिनों के लिए कश्मीर में रेखा के पास रहता है। वह उस नवजात शिशु की जो अभी रेखा के पेट में पल रहा है उसकी नैतिक जिम्मेदारी स्वीकार करते हुए रेखा के सामने शादी का प्रस्ताव रखता है। उस बालक को अपना नाम देना चाहता है लेकिन रेखा उस प्रस्ताव का इन्कार कर देती है क्योंकि वह जानती है कि गौरा के मन में भुवन के प्रति उतनी ही श्रद्धा और प्यार है और भुवन भी गौरा पर आसक्त है। इसलिए वह उन दोनों से दूर हटकर रहना चाहती है। वह शिशु भुवन की बाधा ना बन जाए इसलिए खुशी से वह अपना गर्भपात करवा लेती है। इसी बीच भुवन और गौरा का प्रेम पुष्पित एवं पल्लवित होता है। रेखा इस आकर्षण को प्रोत्साहित करती है और भुवन को मन में बसाएँ डॉक्टर रमेशचंद्र से शादी कर लेती है। भुवन भी गौरा से विवाह करने के लिए प्रस्तुत हो जाता है।

`नदी के द्वीप` अज्ञेय जी का द्वितीय उपन्यास है। पात्रों के मनोविश्लेषण को महत्त्वपूर्ण मानकर अत्यंत नगण्य कथावस्तु के आधारपर 415 पृष्ठों का बृहत् उपन्यास लिखना प्रतिभासंपन्न लेखक का ही काम होता है। इस कथावस्तु में सामाजिकता का पूर्णत: अभाव ही दिखाई पड़ता है। यह एक प्रणय की अत्यंत सुकुमार कथा है। वैसे देखा जाय तो यह चरित्र-प्रधान ही उपन्यास है जिसमें पात्रों की सूक्ष्म मनोविज्ञान का यथेष्ट वर्णन है। कुल मिलाकर ग्यारह खंडों में विभाजित कथावस्तु बहुत ही छोटी होते हुए भी कथा को दार्शनिकता, अन्त:संघर्ष, तर्क-बुद्धि और मनोविश्लेषण के कारण विस्तार मिला है। खंडों के बीच की कडी को जोडने का काम पाठक स्वंय करता है। `नदी की द्वीप` की कथावस्तु के बारे में डा.देवेश ठाकुर कहते हैं - ....``वस्तुत: `नदी के द्वीप` वस्तु की दृष्टि से जीवन की कथा नहीं, जीवन के अविस्मरणीय क्षणों की कथा है।``[10] भुवन के दो प्रणय प्रसंगों का अति-चित्रण कथा में बाधा अवश्य उत्पन्न करता है।

यह उपन्यास चरित्र का ही उपन्यास है। पात्रों की दृष्टि से इसमें चार पात्र ही प्रमुख हैं - भुवन, रेखा, चंद्रमाधव और गौरा। भुवन नायक, रेखा नायिका तो चंद्रमाधव को खलनायक के रुप में चित्रित किया है। गौरा का चित्रण उतना ही हुआ है जितना कि रेखा और भुवन के चरित्र को ऊँचा उठाने के लिए आवश्यक है। प्रस्तुत पात्रों की सबसे बडी विशेषता यह है कि सभी शिक्षित, संवेदनशील एवं विचारक हैं। अपना निर्णय खुद लेने में भी वे सक्षम हैं। वे किसी पर भी बोझ नहीं बनते। वे वार्तालाप या पत्रों में

अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए अनेक उद्धरणों का सहारा लेते हैं। भुवन अनुसंधान का छात्र है लेकिन पूरे उपन्यास में वह कहीं भी अपने कार्य में जुटा हुआ नजर नहीं आता। वह हमेशा रेखा या गौरा के पिछे दौडता हुआ दिखाई देता है। रेखा का चित्रण एक स्वाभिमानी नारी, समर्पनशील प्रेमिका के रुप में किया गया है। चंद्रशेखर को खलनायक और साम्यवादी विचारधारा के प्रतीक के रुप में अभिव्यक्त किया गया है। अपने सभी दोष असफल होने पर वह दूर चला जाता है। गौरा एक सत्शील भारतीय नारी के रुप में हमारे सामने आती है। अत: प्रस्तुत उपन्यास में पात्रों का चित्रण बहुत ही सरस हुआ है।

`नदी के द्वीप` में संवादों की प्रचुरता ही नजर आती है। उसमे भी भावात्मक संवादों की ही अधिकता है। प्रेमकथा के कारण सभी संवाद मर्मस्पर्शी बन गए हैं। कुछ संवादों में नाटकीयता का भी समावेश हुआ है। कुछ प्रतीकात्मक संवाद भी दिखाई देते हैं। पात्रों के संवादों से उनकी बौद्धिक परिपक्वता का परिचय होता है। अनेक जगहों पर पात्रों की मन:स्थिति को स्पष्ट करने के लिए कविता या किसी रचना के उद्धरणों का सहारा भी लिया गया है। अंग्रेजी के माध्यम से बहुत बड़े कथन को बहुत ही सीमित करके कहा गया है। जैसे गौरा के सामने अपने अपराध को स्वीकार करते हुए भुवन जो कहता है वह प्रसंग।- .....``कई मिनट बाद भुवन ने कहा - ``कहानी लंबी है, गौरा पर बहुत छोटी भी है।`` सहसा एक कठोर निष्कसण भाव से ``आई लव्ह हर। वी वेअर टु हैव ए चाइल्ड। आई किल्ड हिम।``[11]

भाषाशैली की दृष्टि से `नदी के द्वीप` एक मौलिक रचना है। इस उपन्यास की भाषा सर्वत्र उन्नत, प्रभावशाली एवं आकर्षक है। सभी पात्र शिक्षित होने के कारण भाषा में भी प्रौढता लक्षित होती है। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अभिव्यक्ति करनेवाली भाषा का प्रयोग किया गया है। पात्रों की भाषा में प्रौढता, व्यंजना, व्यंग्य एवं विनोद भी दिखायी देता है। अरबी, फारसी, बंगाली, अंग्रेजी तथा पंजाबी शब्दों तथा गीतों का प्रयोग भी किया गया है। शैली की दृष्टि से सर्वाधिक पत्रात्मक शैली को ही अपनाया गया है। पत्रात्मक शैली के लिए `अंतराल` नामक दो खंडों का अलग ही चित्रण किया गया है। अत: कथा को आगे बढ़ाने और पात्रों के अंतर्मन को व्यक्त करने में इस शैली का उपयोग हुआ है। प्रत्यावलोकन पद्धति का भी प्रयोग किया गया है। उपन्यास का प्रारंभ ही प्रत्यावलोकन पद्धति द्वारा हुआ है। दृश्यात्मक एवं परिदृश्यात्मक प्रविधि को भी लेखक ने प्रयोग में लाया है। कुछ पात्र डायरी भी लिखते हैं, अत: डायरी शैली का भी प्रयोग हुआ है। शिक्षित पात्र होने के कारण वार्तालाप में और पत्रों में भी

उद्धरणों का प्रयोग हुआ है। अत: अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत, बंगाल, पंजाबी उद्धरण दिए गए हैं। लेखक ने मनोविश्लेषण विधि का भी प्रयोग किया है। साथ ही प्रतीकात्मकता का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। अत: भाषाशैली की दृष्टि से यह एक अद्वितीय रचना रही है।

देश काल वातावरण की दृष्टि से `नदी की द्वीप` असफल रचना रही है क्योंकि पूरी प्रेमकहानी होने के कारण देशकाल का ध्यान ही लेखक को नहीं रहा है। पात्रों की मानसिक अवस्था का चित्रण करने के प्रयास में देश काल तथा वातावरण दूर्लक्षित ही रहा है। अत: बहुत सारे शहरों और स्थानों का चित्रण होकर भी उसमें वास्तविकता लक्षित नहीं होती। भुवन तथा रेखा के प्रणय प्रसंगों को उजागर करने के लिए ही कुछ स्थानों का चित्रण हुआ है। अज्ञेय मूलत: निसर्ग प्रेमी होने के कारण उन्होंने निसर्ग के चित्रण में कोई कमी नहीं छोडी है। द्वितीय विश्वयुद्ध का चित्रण उपन्यास के अंत में नगण्य स्वरुप में किया गया है। फिर भी इतने बडे उपन्यास में वह चित्रण अपना कोई महत्त्व नहीं रखता। स्पष्ट है कि आंतरिक चित्रण के प्रयास में लेखक बाह्य चित्रण को पूर्णत: भूल ही गए है। परिणामस्वरुप देश काल तथा वातावरण का अभिव्यक्तिकरण करने में अज्ञेय असफल रहे हैं।

उद्देश्य की दृष्टि से भी यह एक सक्षम रचना रही है। सुकुमार प्रणय की कथा स्पष्ट करने का प्रयास इसमें किया गया है। साथ ही साथ प्रेम, यौनतुष्टि और विवाह की समस्या को चित्रित करना यह एक प्रमुख उद्देश्य लेखक का रहा है। व्यक्तिचेतना के अनुरुप व्यक्तिवाद को महत्त्व देना भी एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। अत: प्रस्तुत उपन्यास में सामाजिकता का पूर्णत: अभाव भी दिखायी देता है। व्यक्तिगत चेतना प्रस्तुत करना ही लेखक का प्रमुख उद्द्देश्य रहा है। साथ साथ आज की नारी पुरुष परिचलित युग में अपना सर उठा रही है, वह किसी का बोझ न बनते हुए अपने बलबुते पर खडी हो सकती है यह दिखाने का भी प्रयास किया गया है। अत: उद्देश्य की दृष्टि से `नदी के द्वीप` एक सफल रचना है।

2.3 अपने-अपने अजनबी :-

प्रस्तुत उपन्यास अज्ञेयजी का अंतिम उपन्यास है। प्रथम दो उपन्यासों में स्वतंत्रता, देशसेवा और प्रेम की बातें करनेवाले अज्ञेय अचानक अपने पाठकों को मृत्यु का साक्षात्कार कराते हैं। उपन्यास की कथावस्तु `योके और सेल्मा`, `सेल्मा`, `योके` इन तीन अनुभागों में विभाजित है।

पौर्वात्य संस्कृति और पाश्चात्य संस्कृति के बीच चल रहे आस्थावाद और अनास्थावाद के विवाद में आखिर पौर्वात्य याने भारतीय संस्कृति की ही विजय होती है। पाश्चात्य संस्कृति क्षणवादी है, वह ईश्वर को भी नहीं मानती लेकिन आखिर उसे हारकर पौर्वात्य संस्कृति की शरण में आना ही पडता है। मृत्यु का साक्षात्कार कराने के साथ ही साथ व्यक्ति के जीवन में कुछ ऐसी स्थितियाँ आती हैं कि तब `अपने अजनबी` और `अजनबी अपने` बन जाते हैं। यहाँ बहुत ही सीमित कथा और पात्रों के माध्यम से स्पष्ट करने का सफल प्रयास लेखक द्वारा किया गया है।

योके अपने प्रेमी पॉल के साथ सफर पे आयी थी कि अचानक बर्फ गिरने से वह एक कटघरे में अटक जाती है। वही पर मिसेस एकेलोफ (सेल्मा) भी रहती है। सेल्मा जीवन के अनुभव लेकर बुढी हो चुकी है। वह आस्थावादी पात्र है। योके मन में तय करके आयी थी कि इस साल भी नियती का खेल ही कुछ अजिब था जिसने अनास्थावादी योके से अस्थावादी सेल्मा को मिलाया था। दोनों एक-दूसरे हो अजनबी होकर भी अपनी विवशता के कारण उस बंद काठघर में रहने के लिए मजबूर है। नसीब से उनके पास इंधन और खाने की चीजें विपुल थी। मौत के नजदिक ठहरी सेल्मा हर चिज की ओर आस्था से देखती है लेकिन अभी जवान होकर और पूरा अभोगा जीवन साथ लेकर भी योके जीवन की ओर अनास्था से ही देखती है। इसी कारण वह मन से सेल्मा पर खिजती है। योके उस काठघर को कब्र ही मानती है। वह मन में सोचती है-.....``यही बर्फ से ढँका हुआ काठ का बंगला उनकी कब्र बन जाएगा? बल्कि कब्र बन क्या जाएगा, कब्र तो बनी-बनाई तैयार है और उन्हीं को मरना बाकी है।``[12]

सेल्मा गडरियों की माँ है। उसके तीन लडके हैं, जिसमें से दो गडरिएँ और एक लड्कहारा है। तीनों हर साल की तरह इस साल भी नीचे जाते है और जाडों के बाद ही लौटकर आते हैं। सेल्मा भी हर साल उनके साथ जाती थी लेकिन इस साल नहीं जाती है। योके अस्थिर विचारोंवाली युवती के कारण वह कभी सोचती है कि पॉल उसे ढूँढ निकालेगा, लेकिन अगले ही क्षण ही वह मृत्यु के बारे में सोचने लगती है।

योके को विश्वास है कि पॉल उसे अवश्य खोज निकालेगा क्योंकि पॉल योके से कहा करता था कि - ....``तुम दुनिया के किसी भी देश में हो तों मैं तुम्हें खोज निकालता.......लाखों, करोडों

में मैं तुरंत पहचान लेता....... वह दूसरी टोली के साथ दूसरे पहाड पर गया था और बर्फ उतरते आते हुए नीचे मिलने के बात थी। ढाई महीने-तीन महीने! कब्रगाह- क्रिसमस! पाताल लोक में देश-शिशु का उत्सव ! नरक में भगवान! पाल ढूँढ निकालेगा! पर किसको ? मुझको या मेरी.......।`` [13] योके बरफ के तुफानों में घिरी है। स्थिति निराशापूर्ण है। रह-रह कर अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए वह सोच उठती है। एक धुँधली रोशनी एक ठिठका हुआ निसंग जीवन।

सेल्मा का बहुत बड़ा बिता हुआ अतीत भी है। जवानी में सेल्मा जिस कस्बें रहती थी उस कस्बे के आगे मैदान में बाग और बाग के पास नदी थी। नदी पर धनुष्याकृति पुल था। सन् 1906 में आयी बाढ और भूचाल के कारण पुल नष्ठ हो जाता है। सेल्मा, यान और फोटोग्राफर की दुकानें ही पुल पर रह जाती हैं। तीनों का लोगों से संपर्क टूट जाता है। सेल्मा, यान और फोटोग्राफर की दुकानें ही पुल पर रह जाती हैं। तीनों का लोगों से संपर्क टूट जाता है। सेल्मा की अपनी चाल की दुकान थी, वह उन दोनों से दूगुना दाम वसुल करती थी। एक दिन पीने के पानी के अभाव में फोटोग्राफर नदी का गंदा पानी पीता है और बीमार पडता है, बीमारी से त्रस्त होकर वह नदी में कुदकर अपनी जान दे देता है। स्वार्थी सेल्मा को जब यान वास्तविकता का परिचय देता है तब उसका ऱ्हदय परिवर्तन होता है और दोनों शादी कर लेते हैं। उन्हें तीन संताने होती हैं फिर यान मर जाता है।

मृत्यु के निकट पहुँची सेल्मा उस बंद काठघर में एक दिन हँसते हुए मृत्यु को अपनाती है। योके उन बातों पर पश्चाताप करती है जो सेल्मा के साथ वाद-विवाद के समय वह कह चुकी थी। उपन्यास के अंत में योके का सतीत्व जर्मनों द्वारा भंग कर दिया जाता है। वह मानसिक दृष्टि से विक्षिप्त हो जाती है। अपने जीवन के अंतिम क्षणों में योके एक भारतीय युवक जगन्नाथ के निकट पहुँच जाती है और अपनी व्यथा सुनाकर मृत्यु को वरण कर लेती है। यहाँ पर उपन्यास का अंत होता है।

`अपने-अपने अजनबी' सन् 1961 में प्रकाशित अज्ञेय जी का अंतिम उपन्यास है। अपने उपन्यास परिपाठी की लिख से अलग हटकर लिखा गया यह लघु-उपन्यास है। तीन अनुभागों में विभाजित इसकी कथा है।

अज्ञेय जी ने उद्देश्यपूर्ति हेतु प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु को सीमित रुप में बाँधा है। अज्ञेय पहले दो उपन्यासों जैसा अवास्तव विस्तार का त्याग कर चुके हैं। इस अभिनव कथावस्तु के बारे में सरोजनी त्रिपाठी जी ने कहा है कि ....``वस्तु-विन्यास की दृष्टि से `अपने-अपने अजनबी' अज्ञेय के नवीन उपन्यासों की शृंखला की अग्रिम कडी है। असाधारण कथानक के चुनाव और उसकी सम्यक अभिव्यक्ति के लिए अपनाई गई असाधारण स्मृति-संकेत आदि विधियाँ वस्तु के समुचित विन्यास में सहायक सिद्ध हुई।``[14] इसमें घटना और वातावरण की भी सीमितता ही है। अतिसीमित कथा को लेकर इतनी सारी बातें करना प्रतिभावान अज्ञेय ही कर सकते हैं।

पात्रों की दृष्टि से देखा जाय तो इसमें प्रमुख दो ही पात्र हैं, योके और सेल्मा। योके प्रेमी युवती है, खतरों से खेलती है। वह पाश्चात्य संस्कृति का नेतृत्व करती है। वह मृत्यु से घबराई हुई, क्षणवादी और ईश्वरवादी है। अंत में वह जहर खाकर जगन्नाथ के बाहों में दम तोडती है। जगन्नाथ पौर्वात्य संस्कृति का प्रतीक है। दूसरा प्रमुख पात्र सेल्मा जो आस्थावादी और भारतीय संस्कृति का प्रतीक है। सेल्मा कैंसर से पीडित है। गौण पात्रों में जगन्नाथ, यान, फोटोग्राफर और पॉल प्रमुख है। इन सभी पात्रों की सर्वप्रमुख विशेषता यह हैं कि सभी पात्र प्रतीकात्मक है। हर पात्र जीवन के लिए संघर्ष करता हुआ दिखाई देता है। फिर चाहे वह मरने के लिए तैयार `सेल्म' हो या पेचिश से तडपता फोटोग्राफर हो अथवा हर समय मृत्यु से घबरानेवाली `योके' हो। सभी पात्र जीवन के लिए झगड़ते हुए दिखायी देते हैं। फिर यह पात्र अपने नहीं लगते क्योंकि लेखक ने पात्रों का इतना ही चित्रण किया है, जिससे उद्देश्य साध्य हो सके। पात्रों को जरा सी भी आजादी नहीं दी है। योके जो नायिका होकर भी उसे ना भूत पर सोचने दिया है न भविष्य पर। इसप्रकार समाज से पूर्णत: वंचित पात्रों को हम पूरी तरह से स्वीकार नहीं कर सकतें।

प्रस्तुत उपन्यास में संवादों का प्रयोग चरित्र निर्माण तथा विचारों की अभिव्यक्ति के उद्देश्य से ही हुआ है। पात्रों के कथोपकथन से उनके व्यक्तित्व का परिचय हमें मिलता है। योके के हर कथन से उसकी क्षणवादी, मृत्यु से डरने की और ईश्वर विरोधी प्रवृत्ति ही दिखायी देती है। सेल्मा के संवादों से उसकी आस्थावादी प्रवृत्ति और ईश्वरनिष्ठा प्रकट होती है। बहुत से संवादों में बोझिलता भरी हुई हैं। बहुदा दार्शनिक संवाद या कथन बोझिल जान पडते हैं और सारे उपन्यास में दार्शनिकता का ही पुट विद्यमान है।

अज्ञेय ने प्रस्तुत उपन्यास में अपने अन्य दो उपन्यासों से पूर्णत: अलग भाषाशैली का प्रयोग किया है। भाषा के ठेठ, सहज एवं तद्भव रुप का ही प्रयोग हुआ है। इस उपन्यास की भाषा में पात्रों के अंतर्द्वंद्व का स्पष्ट करने की अपूर्व क्षमता है। कम से कम शब्दों में अधिक आशय स्पष्ट करनेवाले शब्दों को ही प्रयोग में लाया गया हैं। शैली की दृष्टि से इसमें वर्णनात्मक शैली, डायरी शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, विश्लेषणात्मक शैली तथा तर्क शैली आदि का प्रयोग किया गया है। वर्णनात्मक शैली के प्रयोग में लेखक को काफी सफलता मिली है। डायरी और मनोविश्लेषणात्मक शैली के प्रयोग सर्वत्र किए गए हैं। डायरी शैली इस उपन्यास का प्राणतत्व ही है। उपन्यास को आगे बढाने में भी इसका उपयोग हुआ है।

देश काल और वातावरण में अज्ञेय जी को पूर्णत: असफलता मिली है क्योंकि देश काल के चित्रण से उपन्यास वास्तव लगता है लेकिन यहाँ अज्ञेय जी ने किसी भी स्थान या प्रदेश का नाम और वर्णन नहीं किया है। काठघर किस प्रदेश में है यह भी पता नहीं चलता। दूसरे खंड का पूल या नदी किस प्रांत की हैं यह भी पता नहीं चलता। अंतिम खंड का बाजार कौनसे शहर का है यह कुछ भी समझ में नहीं आता। इसी कारण पाठक के मन में उपन्यास की सत्यता के बारे में संदेह पैदा होता है। सारांशत: अज्ञेय जी ने पात्रों के अंतर्द्वंद्व के चित्रण में बाहय चित्रण को पूर्णत: दूर्लक्षित किया है।

प्रस्तुत उपन्यास उद्देश्य प्रधान है। विविध उद्देश्यों को सामने रखकर लिखा गया यह उपन्यास है। उसका सर्वप्रथम उद्देश्य पाश्चात्य और पौर्वात्य दर्शन का अभिव्यक्तिकरण है। पौर्वात्य संस्कृति आस्थावादी है। पाश्चात्य संस्कृति को आखीर हारकर पौर्वात्य संस्कृति की ही शरण में आना पडता है तभी उसे मुक्ति मिल सकती है। यह बताना ही लेखक का प्रमुख उद्देश्य रहा है। मृत्यु के साक्षात्कार में व्यक्ति अपना संतुलन किस प्रकार खो बैठता है, उसकी मानसिक अवस्था कितनी विकट होती है, इसका चित्रण करना भी एक प्रमुख उद्देश्य रहा है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत अध्याय के विवेचन विश्लेषण के पश्चात निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि कथानक की दृष्टि से अज्ञेय जी को तीनों उपन्यासों में काफी सफलता मिली है। उन्होंने बहुत सीमित कथावस्तु द्वारा

सिर्फ अपने शिल्प-सौष्ठव के माध्यम से प्रस्तुत उपन्यासों को महान ग्रंथों के रुप में परिणत करने का प्रयास किया है। उनका अंतिम उपन्यास `अपने-अपने अजनबी` लघु-उपन्यास कहा जा सकता है। इनके तीनों उपन्यासों की कथा व्यक्तिमन पर केंद्रित होने के कारण उनमें सामाजिकता या समाज जीवन के चित्रण का पूर्णता अभाव ही दृष्टिगोचर होता है। अज्ञेय जी ने पात्रों का चरित्र-चित्रण करने में विशेष उद्‌घाटन कर सफलता अर्जित की है। उपन्यासों में संवादों का भी यथोचित उपयोग हुआ है। भाषाशैली तथा नवीनतम प्रयोग की दृष्टि से अज्ञेय को प्रचुर मात्रा में सफलता मिली है। भाषा-प्रयोग यह उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। उनके उपन्यासों में वाक्य-विन्यास, विशेषण निर्माण पद्‌धति, चित्र-बहुलता, सांकेतिकता एवं गद्य-पद्य का यथोचित मिश्रण आदि का बहुत सुंदर समन्वय परिलक्षित होता है परंतु कुछ स्थानों पर देश, काल तथा वातावरण की दृष्टि से वे पूर्णत: असफल रहे हैं, जैसे `अपने-अपने अजनबी` के कुछ अंश। उद्देश्य दृष्टि से उन्हें पूर्णता सफलता मिली है।

: संदर्भ-सूची :

1) डॉ.देवेश ठाकुर : `नदी के द्वीप`, रचना प्रक्रिया, पृष्ठ-28

2) डॉ.सुकृता अजमानी : प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यासों में बालमनोविज्ञान, पृष्ठ-9

3) अज्ञेय : शेखर : एक जीवनी भाग - 2, पृष्ठ-112

4) वहीं, पृष्ठ-241

5) वहीं, पृष्ठ-246

6) वही, भाग-1 - भूमिका से उद्धृत

7) कुसुम त्रिवेदी : अज्ञेय की औपन्यासिक कृतियाँ - पृष्ठ- 44

8) डॉ.देवेश ठाकुर : `नदी के द्वीप` रचना प्रक्रिया

9) अज्ञेय : नदी के द्वीप, पृष्ठ - 16-17

10)देवेश ठाकुर : `नदी के द्वीप` रचना प्रक्रिया

11)अज्ञेय : नदी के द्वीप - पृष्ठ- 295

12)अज्ञेय : अपने-अपने अजनबी - पृष्ठ - 12

13)वही, पृष्ठ -13

****